दैनिक जागरण
विचार कर्म का बीज है

सत्ता के प्रयोग

लंबे समय तक राजनीतिक अस्थिरता से जूझते कर्नाटक में आखिरकार येदियुरप्पा के नेतृत्व में भाजपा की सरकार बन गई। येदियुरप्पा ने चौथी बार कर्नाटक की सत्ता संभाली है। चूंकि वह अभी तक एक बार भी अपना कार्यकाल पूरा नहीं कर सके हैं इसलिए यह सवाल उनका पीछा कर रहा है कि आखिर उनकी सरकार कब तक चलेगी? यह सवाल इसलिए भी उठ रहा है, क्योंकि भाजपा की सरकार तब बन सकी जब कांग्रेस और जद-एस के एक दर्जन से अधिक विधायकों ने इस्तीफा दिया। भाजपा को आगे इन विधायकों को उपकृत करना पड़ सकता है और ऐसी स्थिति में उसके अपने नेताओं में असंतोष व्याप्त हो सकता है। स्पष्ट है कि येदियुरप्पा सरकार को न केवल अस्थिरता की आशंका को दूर करना होगा, बल्कि जनता की अपेक्षाओं पर खरा भी उतरना होगा। यह आसान काम नहीं, क्योंकि कुमारस्वामी सरकार ने कुल मिलाकर राज्य का अहित ही किया है। वास्तव में वह बनी ही इसलिए थी ताकि उसके और साथ ही कांग्रेस के संकीर्ण राजनीतिक स्वार्थों की पूर्ति हो सके।

कुमारस्वामी सरकार के पतन और येदियुरप्पा सरकार के गठन के बाद जद-एस और कांग्रेस की ओर से ये संकेत दिए जा रहे हैं कि दोनों दलों की दोस्ती भी समाप्त होने जा रही है। ऐसे संकेत यही बताते हैं कि जद-एस और कांग्रेस की दोस्ती केवल सत्ता की साझेदारी के लिए ही थी। अब यह और अच्छे से स्पष्ट हो रहा है कि कर्नाटक में 14 महीने पहले कुमारस्वामी सरकार के गठन के बाद तमाम विपक्षी दलों की ओर से एकजुटता का जो प्रदर्शन किया गया था वह वास्तव में अवसरवादी राजनीति का उदाहरण ही था। शायद इसी नकली एकजुटता के कारण ही राष्ट्रीय स्तर पर महागठबंधन नहीं बन सका। कांग्रेस और जद-एस ने जो कुछ कर्नाटक में किया वही उत्तर प्रदेश में सपा और बसपा ने भी किया। इसके पहले बिहार में जद-यू और राष्ट्रीय जनता दल ने भी ऐसा ही किया था। ये बेमेल गठबंधन थे और इन्हें कामयाब नहीं होना था। समस्या यह है कि ऐसे बेमेल और अवसरवादी गठबंधन बनने का सिलसिला कायम रह सकता है, क्योंकि कई राजनीतिक दलों के लिए सत्ता ही सब कुछ है। इसी कारण आज देश के अधिकांश राजनीतिक दलों की विचारधारा का कोई अता-पता नहीं। इसे राजनीति नहीं कहा जा सकता कि राजनीतिक दल सत्ता पाने के लिए एक साथ आ जाएं और सत्ता से वंचित होने पर छिटक जाएं। यदि यह सोचा जा रहा है कि दलबदल रोधी नियम और सख्त करने से अवसरवादी राजनीति का सिलसिला थम जाएगा तो यह सही नहीं। यह सिलसिला तो तब थमेगा जब मूल्यों और मर्यादा की राजनीति को महत्व मिलेगा।

जवाबदेही की जरूरत

उत्तराखंड में सरकारी महकमों पर सरकार का नियंत्रण नहीं है या फिर उन्हें मनमानी की खुली छूट मिली हुई है। यह यक्ष प्रश्न बना हुआ है। भ्रष्टाचार पर जीरो टॉलरेंस और कामकाज में पारदर्शिता के दावे को सरकार लगातार दोहरा रही है, लेकिन जो तस्वीर सामने आ रही है, वह इस चर्चा को जन्म देती दिख रही है कि सरकार के दावों में वाकई में कितना दम है। उत्तराखंड आयुर्वेद विश्वविद्यालय में खुला अनियमितताओं का पिटारा इसका ताजा उदाहरण है। नियुक्तियां, सामान की खरीद फरोख्त और दूसरी गड़बड़ियों को लेकर विवि चर्चाओं में है। निजी कॉलेजों के संबद्धता शुल्क को लेकर भी बड़े पैमाने पर खामियां सामने आई हैं। अधिकांश निजी संस्थानों से अपेक्षाकृत कम शुल्क जमा कराने की बात सामने आई है। यही नहीं, परास्नात्तक कक्षाओं के लिए विषयों के हिसाब से शुल्क जमा नहीं कराया जा रहा है। बात यहीं खत्म नहीं होती, एक रोज पहले एक और सनसनीखेज खुलासा हुआ कि आयुर्वेद विवि में कुल सचिव पद पर मृत्युंजय मिश्रा की ताजपोशी नियम-कानून ताक पर रखकर की गई। इस 'चहेते' अधिकारी पर इतने मेहरबान कि ग्रेड पे भी 6000 से सीधे 10000 कर दिया। राज्य कैबिनेट में इस मसले को रखा ही नहीं गया। कार्मिक, वित्त, गोपन, न्याय तक से इस प्रस्ताव पर राय लेने की जरूरत नहीं समझी गई। यानी एक शख्स के लिए राजकाज व्यवस्था की ही बलि चढ़ा दी गई। हैरानी इस बात कि राज्य सरकार को तीन साल बाद इसका पता चला। सहज ही समझा जा सकता है कि आयुर्वेद विभाग में कामकाज किस तरह चल रहा है और मककमों पर सरकार की कितनी पकड़ है। यह दीगर बात है कि अब सरकार ने इस अधिकारी की कुल सचिव पद पर की गई नियुक्ति को निरस्त कर उन्हें मूल विभाग में वापस भेज दिया है, लेकिन सवाल अपनी जगह खड़ा है कि अभी तक क्यों इस पर पर्दा पड़ा रहा? सरकार ने किरकिरी से बचने के लिए अधिकारी को मूल तैनाती पर वापस भेजने का आदेश तो कर दिया, लेकिन यह जानने की कोशिश अभी भी नहीं की कि आखिर यह सब कैसे हुआ और किसने किया? यह व्यवस्था पर सीधे-सीधे प्रहार है, फिर क्यों सरकार इतने बड़े घपले के बाद भी जिम्मेदारों को बेनकाब करने से परहेज कर रही है? यह सच भी सामने आना चाहिए कि ऐसा करना सरकार की मजबूरी है या फिर जनता की आंखों में धूल झोंकना चाहती है।

खतरों से खेलता अमेरिका

संजय गुप्त

अमेरिका को यह समझना होगा कि सेना के दबदबे वाले पाकिस्तान को प्रोत्साहन देने से दक्षिण एशिया में शांति का मार्ग प्रशस्त होने वाला नहीं है

अवधेश राजपूत

अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने पाकिस्तानी प्रधानमंत्री इमरान खान से मुलाकात के समय जब यह दावा किया कि दो सप्ताह पहले भारतीय प्रधानमंत्री ने उनसे कश्मीर पर मध्यस्थता करने को कहा था तो देश-विदेश में जोरदार प्रतिक्रिया हुई। ट्रंप के इस बेबुनियाद दावे पर भारत की अंदरूनी राजनीति में भूचाल सा आ गया। यह भूचाल इसके बावजूद आया कि 1972 के शिमला समझौते के बाद से ही कश्मीर पर देश की यही नीति रही है कि यह भारत-पाक के बीच का द्विपक्षीय मसला है। भारत अपनी इस नीति पर बार-बार जोर देता रहा है, क्योंकि पाकिस्तान और साथ ही कुछ कश्मीरी नेता इसके लिए तत्पर रहते हैं कि कश्मीर पर कोई देश मध्यस्थता करे। पाकिस्तान संयुक्त राष्ट्र के साथ अन्य अंतरराष्ट्रीय मंचों पर कश्मीर का मसला उठाता रहता है, जबकि लाहौर समझौते में भी इस मसले को आपसी बातचीत से ही सुलझाने की बात की गई थी। अमेरिका कई बार यह इच्छा जता चुका है कि अगर भारत-पाक चाहें तो वह कश्मीर पर मध्यस्थता करने को तैयार है। खुद ट्रंप ने 2016 में ऐसी मंशा जाहिर की थी, लेकिन इस बार वह जरूरत से ज्यादा बोल गए। इस पर हैरानी नहीं, क्योंकि वह असत्य और अर्द्धसत्य बयान देने के लिए ही जाने जाते हैं। वह राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय मसलों पर न जाने कितनी बार झूठ बोल चुके हैं। अमेरिकी अखबार वाशिंगटन पोस्ट के मुताबिक ट्रंप एक दिन में औसतन 12 झूठ बोलते हैं। वह इमीग्रेशन, विदेश नीति, अर्थव्यवस्था आदि पर भ्रामक बयान देने के लगभग आदी हो चुके हैं। एक बार वह यह कह गए थे कि जर्मनी नाटो को मात्र एक प्रतिशत अंशदान देता है जबकि उसका अंशदान 15 प्रतिशत है। ट्रंप 172 बार यह दावा कर चुके हैं कि वह अमेरिका-मेक्सिको के बीच दीवार बनाने का काम शुरू कर चुके हैं जबकि वहां पहले से मौजूद फेंसिंग की मरम्मत भर हो रही है। ट्रंप के बड़बोलेपन के चलते अमेरिकी विदेश विभाग को कई बार असहज होना पड़ा है। ऐसा बीते दिनों भी तब हुआ जब ट्रंप ने यह कह दिया कि मोदी ने उनसे कश्मीर पर मध्यस्थता का आग्रह किया था। इस पर अमेरिकी विदेश विभाग को यह स्पष्टीकरण देना पड़ा कि कश्मीर पर उसका नजरिया वही है जो पहले था। इसके बावजूद संसद में हंगामा मचा। कांग्रेस समेत कुछ अन्य दलों ने प्रधानमंत्री से बयान देने की मांग की। इन दलों ने विदेश मंत्री एस जयशंकर की ओर से ट्रंप के दावे को खारिज किए जाने के बाद भी यह मांग की। इन दलों ने इसकी भी अनदेखी की कि विदेश मंत्रालय ने तत्काल ही ट्रंप के दावे का खंडन कर दिया था। इसके अलावा अमेरिका के विपक्षी दल के एक प्रमुख सांसद ने ट्रंप के दावे को लेकर भारतीय राजदूत से माफी भी मांगी थी।

ऐसा नहीं हो सकता कि विपक्षी दलों को इसका अहसास न हो कि ट्रंप झूठे बयान देते रहते हैं और उनके ऐसे बयानों को इसलिए गंभीरता से नहीं लिया जा सकता, क्योंकि वह कहते कुछ हैं और करते कुछ हैं। विपक्षी दलों ने ट्रंप के बयान को तूल देकर यही स्पष्ट किया कि वे सरकार को असहज करने की ताक में रहते हैं। इसमें हर्ज नहीं, लेकिन कम से कम उन्हें विदेश नीति पर तो दलगत राजनीति से परे रहना चाहिए। संसद में हंगामा करने वाले दल इससे अनभिज्ञ नहीं हो सकते कि ओसाका में ट्रंप और मोदी की मुलाकात के बाद जारी वक्तव्य में उस बात का कोई जिक्र नहीं था जिसका दावा अमेरिकी राष्ट्रपति ने किया। ट्रंप ने इमरान से बात करते हुए यह दावा भी किया कि वह एक करोड़ अफगानियों को मारना नहीं चाहते, नहीं तो दस दिन के अंदर अफगानिस्तान युद्ध जीत सकते हैं।

9-11 के बाद अलकायदा के खिलाफ हमले के बाद से ही अमेरिकी सेनाएं अफगानिस्तान में हैं। अल कायदा तो पस्त पड़ चुका है, लेकिन उन्हें संरक्षण देने वाला तालिबान अफगानिस्तान की स्थिरता के लिए खतरा बना हुआ है। तालिबान को पाकिस्तान का संरक्षण और समर्थन हासिल है। अमेरिका में अगले साल होने वाले राष्ट्रपति चुनाव को लेकर सियासी सक्रियता बढ़ गई है। ट्रंप दोबारा यह चुनाव जीतना चाहते हैं। इसके लिए वह अमेरिकी जनता को लुभाने का हर संभव जतन कर रहे हैं। ट्रंप चाहते हैं कि पाकिस्तान तालिबान को समझौते के लिए राजी करे ताकि अमेरिकी सेनाएं अफगानिस्तान से लौट सकें। अपने इस चुनावी वादे को पूरा करने के लिए ट्रंप अफगानिस्तान के साथ दक्षिण एशिया को खतरे में डाल रहे हैं। अगर तालिबान को अफगानिस्तान में हावी होने का मौका मिला तो वहां की सरकार को सत्ता छोड़नी पड़ सकती है और वहां वैसी ही अस्थिरता व्याप्त हो सकती है, जैसी 2000 के दशक में थी। पता नहीं अमेरिका का तालिबान से समझौता हो पाता है या नहीं, लेकिन इसका अंदेशा अवश्य है कि अफगानिस्तान से अमेरिकी सेनाओं की वापसी के बाद वहां वैसी ही स्थिति बन सकती है जैसी इराक या फिर लीबिया में बनी। एक व्यापारी होने के नाते ट्रंप मात्र अपना हित देख रहे हैं। चूंकि अमेरिकी जनता का एक बड़ा तबका इससे खुश नहीं कि अमेरिका अब तक अफगानिस्तान में उलझा हुआ है इसलिए ट्रंप यह जानते हुए भी जल्दबाजी दिखा रहे हैं कि अफगान-पाक सीमा पाकिस्तानी संरक्षित आतंकियों का गढ़ बनी हुई है।

इमरान खान के समक्ष ट्रंप ने कश्मीर को लेकर जो बयान दिया उसे पाकिस्तान भले ही अपनी जीत के तौर पर देखे, लेकिन यह तय है कि भारत अपने रवैये से डिगने वाला नहीं। कश्मीर, अफगानिस्तान जैसे मसलों पर चर्चा के कारण ही इमरान खान के साथ पाक सेना प्रमुख और आइएसआइ प्रमुख भी अमेरिकी यात्रा पर थे। यह पाकिस्तानी शासन पर सेना के दबदबे का प्रमाण है। अमेरिका से लौटने पर इमरान खान का जोरदार स्वागत इसीलिए हुआ ताकि आम पाकिस्तानी जनता को यह संदेश दिया जा सके कि वह कश्मीर और अफगानिस्तान जैसे मामलों पर अमेरिका का रुख एक हद तक अपने पक्ष में करने में कामयाब रहे। यह संदेश देने की भी कोशिश की गई कि कश्मीर पर भारत को झटका लगा और साथ ही अफगानिस्तान में उसका प्रभाव कम होने वाला है।

पाकिस्तान कुछ भी जाहिर करे, अमेरिका और अन्य देशों को यह समझना होगा कि सेना के दबदबे वाली पाक सरकार को प्रोत्साहन देकर दक्षिण एशिया में शांति का मार्ग प्रशस्त होने वाला नहीं है। आज जो कश्मीर में अशांति है उसके पीछे पाकिस्तान पोषित आतंकी ही हैं। पाकिस्तान ने अभी तक खुद को आतंकवाद से अलग नहीं किया है। इसकी पुष्टि खुद इमरान खान के इस बयान से होती है कि पाकिस्तान में अभी भी 30-40 हजार आतंकी मौजूद हैं। उन्होंने यह स्पष्ट नहीं किया कि इतने आतंकियों पर वह कैसे काबू पाएंगे? अमेरिकी राष्ट्रपति अपने राजनीतिक स्वार्थ के कारण पाकिस्तान की हकीकत से मुंह मोड़ सकते हैं, लेकिन भारत के हित में यही है कि वह न केवल सतर्क रहे, बल्कि अमेरिका को इसके लिए आगाह भी करे कि पाकिस्तान समर्थित तालिबान से समझौता आतंकवाद को नए सिरे से उभारने का काम कर सकता है।

response@jagran.com

चमत्कारी असर वाला झूठ

हास्य-व्यंग्य

संतोष त्रिवेदी

यह झूठ के बढ़ते प्रभाव का ही परिचायक है कि वह 'ग्लानि' को भी 'ग्लैमर' में तब्दील कर देता है

हमें झूठे लोग बेहद पसंद हैं। वे बड़े निर्मल-हृदय होते हैं। कभी भी अपने झूठे होने का घमंड नहीं करते। ये तो सच्चे लोग हैं जो अपनी सच्चाई की डींगें मारते फिरते हैं। झूठा अपने झूठे होने का स्वांग नहीं करता। खुलकर और पूरे होशो-हवास में बोलता है। वह खुद इस बात का प्रचार नहीं करता। उसके 'प्रशंसक' ही कर देते हैं। कहते हैं सच बोलने के लिए बड़े कलेजे की जरूरत होती है, पर झूठ बोलने के लिए महज एक भेजे की। यह भेजा बिना शोर किए अपने नित्य-कर्म में तल्लीन रहता है।

झूठ बोलने वाला बिल्कुल तनाव-रहित होता है। मौका पड़ते ही अतिरिक्त लचीला हो जाता है। सच की तरह उसमें अकड़ नहीं होती। इसीलिए सच टूटता है और झूठ कायम रहता है। कहते हैं कि झूठ के पांव नहीं होते, पर झूठ एक दांव तो हो ही सकता है। जिस तरह झूठ के चलने की संभावना होती है, वैसे ही दांव की भी। चल गया तो चल गया नहीं तो रणनीति तो है ही। झूठ अपने सच होने के लिए संदेह को साथी बनाता है। शायद इसीलिए 'बेनीफिट ऑफ डॉउट' सच के बजाय झूठ को मिलता है। वैसे भी सच कड़वा होता है। न उगलते बनता है न निगलते। झूठ बेहद सुविधाजनक होता है। जुबान पर रखते ही मिसरी-सा घुल जाता है। सुनने में भी अच्छा लगता है। झूठ बोलने का लंबा अनुभव होने पर जुबान लड़खड़ाने का खतरा नहीं होता।झूठ को किसी के समर्थन की दरकार नहीं होती। सच जहां सबूत ढूंढता फिरता है, झूठ खुद ही सबूत होता है। झूठ के पास अपनी ताकत होती है। कमजोर आदमी उसे संभाल भी नहीं सकता। सच डरा-सहमा रहता है जबकि झूठ खुलेआम दहाड़ता है। इसीलिए सच को उगलवाने की जरूरत होती है जबकि झूठ को केवल बोलने की। महाबली जो बोलता है, वही सच होता है। झूठ बोलना राजसी लक्षण है। झूठा होना शर्म का नहीं योग्यता का प्रतीक है। यदि आप अपने तईं झूठ भी नहीं बोल सकते तो कतई नाकारा हैं। अगर आप झूठ बोल रहे हैं तो एक बार बोलकर रुकें या ठिठकें नहीं। लगातार बोलते रहें जब तक वह सच के रूप में स्थापित न हो जाए। इससे एक फायदा यह भी होगा कि सच और झूठ के बीच जो बरसों से खाई बनी है, वह टूटेगी। समाज से भेदभाव भी दूर होगा।

राजनीति में अपनी भारी सफलता से उत्साहित होकर झूठ ने सिनेमा और साहित्य में भी अपनी स्थायी शाखाएं खोल दी हैं। सिनेमा से जहां एक 'चिट्ठी' का रूप धरकर वह क्रांति का बिगुल बजाता है, वहीं भाषा की 'ग्लानि' मुंह पर थोपकर वह साहित्य में संवेदना ले आता है। ऐसे में सच कहीं कोने में दुबका हुआ अपने होने की 'ग्लानि' को छिपाता फिरता है। यह झूठ के बढ़ते प्रभाव का ही परिचायक है कि वह 'ग्लानि' को भी 'ग्लैमर' में तब्दील कर देता है। झूठ इतना चमकदार होता है कि सड़क पर छुट्टा घूमते हुए घोड़े भी उसके अस्तबल में जा घुसते हैं। वहीं सच बड़ा अकेला और खाली-खाली होता है। इसमें किसी भी तरह की रचनात्मकता की गुंजाइश नहीं होती। सच के साहित्य में प्रवेश करते ही कविता अपठनीय हो जाती है। कहानी उदासी और ऊब पैदा करती है। जबकि झूठ के साथ मनचाहे प्रयोग किए जा सकते हैं। वह कल्पनाशक्ति को विस्तार कर साहित्य को समृद्ध करता है। झूठ को साहित्य, राजनीति और सिनेमा हर जगह से निकालकर देखिए, इतिहास मिटने की नौबत आ जाएगी। इसीलिए सच ठिकाने लगा है और झूठ के सब जगह ठिकाने हैं। यहां तक कि अब झूठ बोलने पर 'कौआ' भी नहीं काटता। उसे भी अपनी जान प्यारी है।

अब झूठ बोलना एक कला है। यह सबको आती भी नहीं। हो सकता है जल्द ही इसके 'अभ्यास केंद्र' खुल जाएं। वहां पर नई 'टेक्निक' पर काम हो। झूठ पर शोध-कर्म किए जाएं। इसके लिए समीक्षाओं और आलोचनाओं के रूप में बहुत बड़ा कच्चा माल हमारे साहित्य में पहले से ही उपलब्ध है। इस तरह साहित्य के 'बेगारों' को भी रोजगार की रोशनी दिखेगी और हमारे साहित्यकार 'चेलों' से भरपूर होंगे। झूठ की महिमा में हमने जो कुछ कहा, निरा झूठ है। झूठ इससे कहीं बहुत आगे पहुंच गया है। पहले झेंपकर झूठ बोला जाता था, अब पूरे सलीके के साथ। शायर वसीम बरेलवी ने इसी मौके को ताड़ते हुए कहा है, 'वो झूठ बोल रहा था बड़े सलीके से, मैं ऐतबार न करता तो क्या करता!'

आप भी उनके कहे का एतबार क्यों नहीं करते?

response@jagran.com

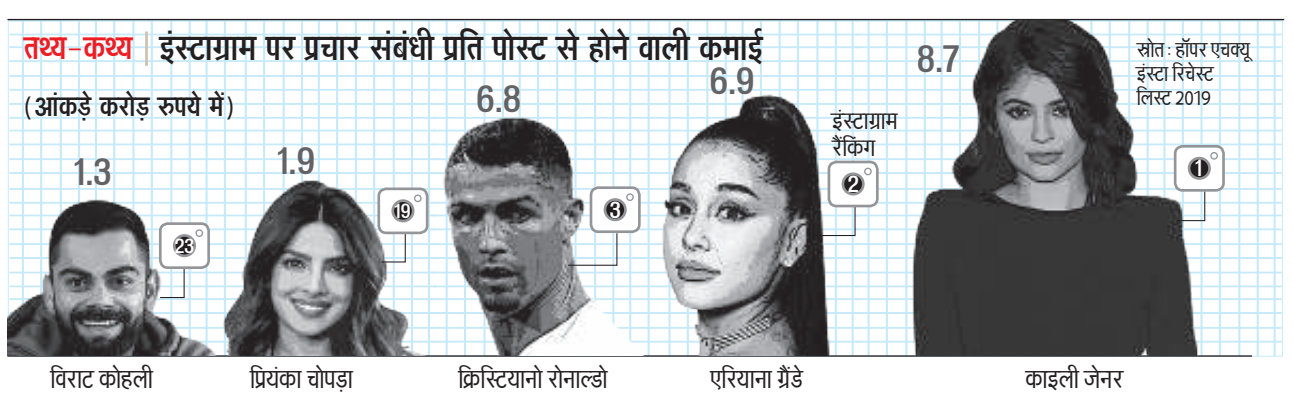

ऊर्जा

संकट में अवसर

जिंदगी है तो सुविधाएं भी होंगी और असुविधाएं भी। मुश्किलें भी होंगी और आरामदायक स्थितियां भी। आरामदायक स्थितियां जहां अवसर समाप्त करती हैं, वहीं संकटपूर्ण स्थितियां अवसर की उत्पत्ति का मुख्य स्रोत होती हैं। विचारक स्टैनली अरनॉल्ड भी यह मानते हैं हर समस्या में उसके समाधान के बीज निहित होते हैं। प्रत्येक संकट में एक अवसर और नई खोज छिपी हुई होती है। बस इसके लिए संकट के समय धैर्य और सूझबूझ की आवश्यकता होती है, हालांकि यह काम मुश्किल है, क्योंकि परेशानी के समय अधिकांश लोग हड़बड़ा जाते हैं और अर्थ का अनर्थ कर लेते हैं। विरले लोग ही संकट से पार पाते हैं और जो इन्हें सुलझाना सीख लेते हैं, वे इतिहास रच देते हैं।

यह कोई नई बात नहीं है कि संकट से अवसर निकलते हैं। जब भी आपके सामने कोई संकट आए तो कागज कलम लेकर बैठ जाएं। अपने संकट को कागज पर लिखें। इसके बाद लाइन खींचकर एक जगह पर संकट से होने वाले बुरे परिणामों को लिखें और दूसरी ओर ये लिखें कि उस संकट में से क्या बेहतर आप निकाल सकते हैं। यह नीति अत्यंत कारगर है। एक बार अपनी इस नीति को अपनाने का प्रयास कीजिए, यकीन मानिए कागज पर लिखने के साथ-साथ आपका संकट न केवल बहुत कम हो जाएगा, बल्कि आप उन्हीं संकटों से नए अवसर निकाल लेंगे। संकट केवल उनके लिए ही परेशानी उत्पन्न करते हैं जो उनमें समस्याएं देखते हैं। जीवन में किसी भी कार्य एवं वस्तु को दो तरह से देखा जा सकता है-एक उनमें अच्छाई देखकर और दूसरा उनमें बुराई देखकर।

प्रत्येक कार्य में अच्छाई देखने वालों के लिए संकट सदा ही सफलता का मार्ग बनते हैं। यदि आप चाहते हैं कि कुछ ऐसा कार्य करें जिसकी सराहना पूरे विश्व में हो तो अभी से संकट के मार्ग को तलाशना आरंभ कर दें, अवसर उसका अगला पड़ाव हैं और प्रगति मंजिल। जो लोग संकटों के बीच में रहकर मुस्कराना जानते हैं, वही आने वाले समय में बड़ी सफलता के हकदार होंगे।

रेनू सैनी

मंगल मिशन से बंधी उम्मीदें

मुकुल व्यास

मंगल पर मौजूद क्यूरिऑसिटी रोवर की तुलना में नासा के नए रोवर में और उन्नत उपकरणों से अहम सुराग मिल सकते हैं

एक नए अध्ययन के अनुसार अरबों वर्ष पहले मंगल पर जीवन था। तब पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति नहीं हुई थी। इस अध्ययन के अनुसार लाल ग्रह पर उल्कापिंडों का प्रहार बंद होने के बाद करीब 4.48 अरब वर्ष पहले मंगल पर हालात जीवन के लिए अनुकूल थे। 'नेचर जियोसाइंस' में प्रकाशित अध्ययन के लेखक डेसमंड मोसेर ने कहा कि संभव है कि 4.5 अरब से 3.5 अरब वर्ष के बीच वहां जीवन पनपा हो। करीब 4.2 से 3.5 अरब वर्ष पहले मंगल की सतह पर उल्कापिंडों के जो जबर्दस्त प्रहार हुए थे, उन्होंने ग्रह के भीतरी भागों से पानी बाहर निकालने की प्रक्रिया को तेज किया होगा।

इससे जीवन-निर्माण में सहायक क्रियाओं के लिए आधार तैयार हुआ होगा। इस अध्ययन से मंगल पर नमूने एकत्र करने के लिए उपयुक्त स्थल चुनने में मदद मिलेगी। इसके शोधकर्ताओं ने मंगल पर मौजूद प्राचीनतम खनिजों का विश्लेषण किया। उन्होंने इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोपी और एटम प्रोब टोमोग्राफी के जरिये मंगल के उल्कापिंडों में मौजूद जिरकॉन और अन्य कणों की छानबीन की। यह माना जाता है कि मंगल की उत्पत्ति 4.6 अरब वर्ष पहले हुई और करीब छह करोड़ वर्ष बाद पृथ्वी अस्तित्व में आई। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि पृथ्वी पर जीवन की शुरुआत 3.5 अरब वर्ष पहले हुई थी। मंगल पर जीवन चिन्हों की तलाश के लिए नासा अगले वर्ष गर्मियों में एक नया 'रोवर' लाल ग्रह पर भेजेगा।

फिलहाल मंगल पर मौजूद क्यूरिऑसिटी रोवर की तुलना में इस नए रोवर के सभी उपकरण अधिक शक्तिशाली होंगे। नासा के इंजीनियर इस रोवर को अंतिम रूप देने में जुटे हैं। पिछले दिनों उन्होंने रोवर में सुपरकैम मास्ट यूनिट फिट किया जो कि रोवर का अत्यंत महत्वपूर्ण अंग है। सुपरकैम क्यूरिऑसिटी रोवर पर लगे केमकैम का उन्नत रूप है। इसमें रमन स्पेक्ट्रो-फोटोमीटर, इंफ्रारेड स्पेक्ट्रो-फोटोमीटर और एक टेलीफोटो कैमरा शामिल है। इसे अमेरिका, फ्रांस और स्पेन के शोधकर्ताओं ने मिलकर तैयार किया है। नासा के विशेषज्ञों का कहना है कि सुपरकैम की मदद से रोवर मंगल के नमूनों का विश्लेषण करके उनमें जीवन के संकेत खोजने का प्रयास करेगा, भले ही ग्रह के जीवाणु लाखों वर्ष पहले मर चुके हों। सुपरकैम की विशेषता यह है कि वह छह मीटर की दूरी पर भी किसी नमूने पर फोकस कर सकता है। इससे पृथ्वी स्थित रोवर के नियंत्रकों को नया नमूना स्कैन करने के लिए रोवर में बार-बार समायोजन करने की जरूरत नहीं होगी।

उम्मीद है कि जल्द ही नासा शोधकर्ता रोवर पर नमूना एकत्र करने वाला सिस्टम लगाएंगे। यह उपकरण मंगल की मिट्टी से नमूने एकत्र करने के लिए 17 मोटरों का प्रयोग करेगा। ये नमूने रोवर में संभाल कर रखे जाएंगे। भविष्य में एक ऐसा मिशन मंगल पर भेजा जाएगा जो इन्हें एकत्र करके पृथ्वी पर लाएगा। मार्स 2020 रोवर फरवरी 2021 में मंगल पर पहुंचने के बाद जजीरो क्रेटर पर उतरेगा। लाल ग्रह की सतह पर सक्रिय होने के बाद यह रोवर उन जैविकों की तलाश करेगा, जिन्हें क्यूरिऑसिटी रोवर के उपकरण अभी तक पकड़ नहीं पाए हैं।

(लेखक स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

राजरंग

सुरक्षा के लिए मंडराते नेताजी

राजनीति में नेताओं के इर्द-गिर्द अमला-फौज की मौजूदगी उनकी ताकत और प्रभाव का अहसास कराती है। इसमें जब नेता के पास केंद्र की ओर से मुहैया कराई गई कुछ विशेष श्रेणियों की सुरक्षा हो तो फिर बात ही एकदम अलग हो जाती है? कई नेता तो इस विशेष सुरक्षा श्रेणी को अपनी सियासत चमकाने का खास हथियार बनाने से गुरेज नहीं करते। सुरक्षा की समीक्षा के बाद हाल में केंद्र सरकार ने कई नेताओं की सुरक्षा हटा या घटा दी है। अब जब सियासत चमकाने का यह हथियार अचानक छिन जाए तो नेताजी का परेशान होना लाजिमी है। इसीलिए सुरक्षा से वंचित किए गए उत्तर प्रदेश, बिहार, पंजाब और बंगाल सरीखे कई राज्यों के ऐसे नेता इन दिनों गृहमंत्री अमित शाह से मिलने के लिए संसद भवन स्थित उनके कार्यालय के बाहर मंडराते नजर आते हैं। बहरहाल कमांडो के लिए गृहमंत्री के बाहर खुद कमांडो की तरह मंडराते रहने की नेताजी की कसरत कितनी कामयाब होगी यह तो वक्त ही बताएगा।

पहचान का संकट

सत्रहवीं लोकसभा में भारी बहुमत से जीतकर आई भाजपा में कई ऐसे सांसद भी हैं जो चुनावों से ठीक पहले अपनी मूल पार्टी छोड़कर भाजपा में शामिल हुए और चुनाव भी जीत गए। इनमें से कुछ विधायक रहे हैं तो कुछ पहले भी लोकसभा में रह चुके हैं, लेकिन भाजपा के टिकट पर जीतकर आने के बावजूद संसद में उनके सामने पहचान का संकट बना हुआ है। चूंकि भाजपा में भी कई नेता पहली बार चुनाव में जीत कर आए हैं इसलिए ऐसे सांसदों में आपसी जान-पहचान नहीं के बराबर हैं। दूसरे दलों से भाजपा में आए ये नेता अपनी ही पार्टी में उपेक्षित सा महसूस कर रहे हैं, लेकिन इन्होंने भी अब पार्टी में अपनी जान-पहचान बढ़ाने का तरीका निकाल लिया है। ये लोग अपनी पुरानी पार्टी के वरिष्ठ नेताओं की मदद से भाजपा में अपनी पहचान के संकट को दूर करने की कोशिश कर रहे हैं।

फिटनेस फ्रेंड्स

राजनीति के मंच पर सत्तापक्ष और विपक्ष के सदस्य भले ही एक दूसरे पर तीखी टिप्पणी करते हों, लेकिन एक जगह ऐसी भी है जहां वे आपस में प्रतिस्पर्धा कर एक दूसरे के मित्र बन रहे हैं। सत्रहवीं लोकसभा के कई ऐसे सदस्य हैं जो अपनी फिजिकल फिटनेस को लेकर बेहद संजीदा रहते हैं। यही वजह है कि आजकल इन सदस्यों ने लोदी गार्डन से लेकर कांस्टीट्यूशन क्लब तक हर जगह फिटनेस के मामले में अनौपचारिक ग्रुप बना लिए हैं। ये समूह पार्टी लाइन से बाहर हैं और इनमें चर्चा राजनीति की नहीं, बल्कि इस बात की होती है कि किसने कितने किलोमीटर वॉक किया और कितने मिनट तक स्विमिंग की। इनमें ज्यादातर ऐसे सदस्य शामिल हैं जो पहली बार सदस्य चुनकर आए हैं। कुछ सदस्यों ने तो अपने आशियाने में ही कुछ व्यवस्था कर ली है। एक सदस्य महोदय ने बाकायदा क्रिकेट पिच बना रखी है। बताते हैं वह खुद भी बॉलिंग करते हैं। बहरहाल, राजनीति न सही कम से कम फिटनेस के मामले में वे एक दूसरे के मित्र हैं।

अध्यक्ष जी का डर

अमित शाह के राज्यसभा से लोकसभा में आने के बाद निचले सदन के कई पुराने सांसदों की सांसें अटक गई हैं। पिछली लोकसभा में हर मुद्दे पर बढ़-चढ़कर बोलने वाले और टोका-टोकी करने वाले ये सांसद अब किसी तरह बच निकलने की कोशिश करते दिख रहे हैं। इनमें एक सांसद ने तो अपनी सीट ऐसी जगह अलॉट करा ली थी कि सत्ता पक्ष की ओर से किसी भी मंत्री के बोलने की स्थिति में कैमरे के फ्रेम में वह खुद-ब-खुद आ जाया करते थे। जाहिर है कि खुद को प्रचार दिलाने के लिए इससे अच्छा मौका नहीं हो सकता था, लेकिन इस बार यह सांसद महोदय पीछे दीवार के साथ बैठे नजर आते हैं। वैसे लोकसभा में अभी तक सांसदों को बैठने के लिए सीटें आवंटित नहीं हुई हैं, लेकिन लग यही रहा है कि इस बार ये सांसद अपनी सीट पीछे की दीवार के साथ रखने की कोशिश करेंगे ताकि अध्यक्ष की नजरों के सामने पड़ने से बच सकें।

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन.संपादकीय निदेशक-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग,रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय 1-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 * इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं स्वामित्व हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई शुल्क अतिरिक्त।